eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 1, Issue 10, October 2022

हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा

[1]डा0 प्रियंका रानी
[1]सहायक प्रोफेसर हिन्दी, राजकीय महिला स्ना0 महाविद्यालय बिंदकी, फतेहपुर उ0प्र0

Received: 20 October 2022 Accepted and Reviewed: 25 October 2022, Published : 31 October 2022

Abstract

हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन एक सशक्त साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित हो चुका है। आत्मकथा व्यक्ति के जीवनानुभवों, संघर्षों और समाज से उसके संबंधों की एक सचित्र झलक प्रदान करती है। यह न केवल व्यक्ति की आत्माभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि समाज, राजनीति, संस्कृति, जातीयता, स्त्री–अनुभव और संवेदनाओं को भी प्रतिबिंबित करती है। यह शोध–पत्र आत्मकथा लेखन की परंपरा को ऐतिहासिक, सामाजिक, साहित्यिक और विमर्शात्मक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करता है। साथ ही, प्रमुख हिंदी आत्मकथाकारों की कृतियों का अध्ययन कर आत्मकथा लेखन की विविध प्रवृत्तियों, शैलीगत विशेषताओं और विकासक्रम को प्रस्तुत करता है।

कीवर्ड– हिंदी साहित्य, आत्मकथा, आत्माभिव्यक्ति, दलित आत्मकथा, स्त्री आत्मकथा, साहित्यिक परंपरा, अनुभव, यथार्थवाद

Introduction

भारतीय हिंदी साहित्य का स्वरूप विविध विधाओं से समृद्ध है, कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध आदि के साथ–साथ आत्मकथा लेखन भी एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विधा के रूप में उभरकर सामने आया है। आत्मकथा न केवल लेखक के निजी जीवन की घटनाओं और अनुभवों का वर्णन करती है, बल्कि उस काल, समाज और संस्कृति को भी प्रतिबिंबित करती है, जिनमें लेखक ने जीवन जिया होता है। इस प्रकार आत्मकथा लेखन एक व्यक्ति विशेष की निजी कथा होते हुए भी समष्टिगत यथार्थ का प्रतिनिधित्व करती है। हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा अपेक्षाकृत नवीन अवश्य है, किंतु इसकी जड़ें भारतीय साहित्य की परंपरा में गहराई तक फैली हुई हैं। भारतीय संत साहित्य, भक्ति आंदोलन, और संत कवियों की वाणियों में आत्मअनुभव, आत्मावलोकन और आध्यात्मिक यात्रा के विवरण मिलते हैं, जिन्हें आत्मकथात्मक साहित्य के प्रारंभिक रूप माने जा सकते हैं। कबीर, तुलसी, और रैदास जैसे संतों की वाणियों में आत्मसाक्षात्कार के बीज दिखाई देते हैं। हालांकि इनका स्वर आत्मकथा जैसा न होकर आध्यात्मिक और दार्शनिक है, फिर भी आत्मकथा लेखन के बीज रूप इन्हीं में निहित हैं। स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक पुनर्जागरण के समय में आत्मकथा लेखन को नई दिशा मिली। महात्मा गांधी की सत्य के प्रयोग जैसी आत्मकथा ने आत्मानुशीलन और वैचारिक ईमानदारी की मिसाल पेश की। यह कृति न केवल उनके निजी जीवन का दस्तावेज है, बल्कि उस युग की राजनीतिक और नैतिक चेतना का परिचायक भी है। गांधीजी की आत्मकथा का प्रभाव हिंदी लेखकों पर भी पड़ा और यह विधा धीरे–धीरे हिंदी साहित्य में एक सशक्त उपस्थिति दर्ज कराने लगी।

स्वातंत्र्योत्तर काल में जब व्यक्ति की पहचान, अस्मिता, संघर्ष और सामाजिक यथार्थ का महत्व बढ़ा, तब आत्मकथा लेखन और अधिक प्रासंगिक और गहन होता गया। विशेष रूप से 1980 के बाद जब

स्त्री–विमर्श और दलित विमर्श जैसे साहित्यिक आंदोलन उभरे, आत्मकथा ने केवल आत्माभिव्यक्ति का माध्यम न रहकर प्रतिरोध और पहचान के सशक्त उपकरण का रूप ले लिया। ओमप्रकाश वाल्मीकि की जूठन, शरणकुमार लिंबाले की अक्कड़बक्कड़, मन्नू भंडारी की एक कहानी यह भी, और कौशल्या बैसंत्री की दोहरा अभिशाप जैसी आत्मकथाओं ने इस विधा को वैचारिक गहराई, सामाजिक सरोकार और संवेदनात्मक ताप प्रदान किया।

आज के संदर्भ में आत्मकथा लेखन की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। व्यक्ति की आवाज, उसकी अस्मिता, अनुभव और संघर्ष को दस्तावेज़ करना न केवल साहित्यिक कार्य है, बल्कि सामाजिक दस्तावेज़ीकरण का भी अंग बन गया है। डिजिटल युग में ब्लॉग, सोशल मीडिया और संस्मरणात्मक लेखन के रूप में आत्मकथा नए आयाम प्राप्त कर रही है। इस शोध–पत्र में हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा का ऐतिहासिक, वैचारिक, समाजशास्त्रीय और साहित्यिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इसके अंतर्गत आत्मकथा की अवधारणा, विकास, प्रमुख रचनाकारों और कृतियों का मूल्यांकन, दलित और स्त्री आत्मकथा की विशेषताओं का अध्ययन तथा आत्मकथा लेखन की संभावनाओं और चुनौतियों पर विमर्श किया गया है।

आत्मकथा साहित्य की उन विधाओं में से एक है, जो लेखक के निजी जीवनानुभवों के माध्यम से सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक यथार्थ को उजागर करती है। यह एक ऐसी विधा है, जिसमें लेखक स्वयं अपनी जीवन–कथा का वर्णन करता है, न केवल घटनाओं का बल्कि उनके मानसिक, भावनात्मक और वैचारिक प्रभावों का भी। आत्मकथा की महत्ता इस बात में निहित है कि यह व्यक्ति को उसके संदर्भित समय और समाज में एक सक्रिय भागीदार के रूप में प्रस्तुत करती है।

आत्मकथा का सामान्य अर्थ है स्वयं की कथा। यह वह विधा है जिसमें लेखक स्वयं अपने जीवन के विविध पहलुओं को, स्मृतियों के माध्यम से, अपने शब्दों में प्रस्तुत करता है। आत्मकथा में लेखक और विषय एक ही व्यक्ति होता है, और रचना का उद्देश्य आत्म–पहचान, आत्म–मूल्यांकन और आत्म–अन्वेषण होता है।

विश्व साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा गहरी और विविध है। प्राचीन काल में रोमन संत सेंट ऑगस्टीन की कृति Confessions (400 ई.) को आत्मकथा लेखन का पहला महत्वपूर्ण उदाहरण माना जाता है। इसके बाद रूसो की ब्वदमिेपवदे (1782) आत्मकथा के आधुनिक रूप की नींव मानी जाती है, जिसमें लेखक ने ईमानदारी से अपने जीवन के नैतिक और मानसिक द्वंद्वों का चित्रण किया।

पश्चिम में प्रमुख आत्मकथाएँ–

Confessions – सेंट ऑगस्टीन

Confessions – जीन जैक रूसो

Mein Kampf – अडोल्फ हिटलर

The Diary of a Young Girl – ऐनी फ्रैंक

The Story of My Experiments with Truth – महात्मा गांधी (अंग्रेजी में लिखी गई आत्मकथा, जिसका हिंदी में अनुवाद हुआ)

भारतीय साहित्य में आत्मकथात्मक लेखन का बीज वैदिक वाङ्मय, उपनिषदों और संत साहित्य में मिलता है, जहाँ आत्मबोध, आत्मसंशोधन और आत्मप्रकाश की प्रवृत्ति विद्यमान है। भक्ति काल के संतों की वाणियों में 'स्वानुभव' की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। परंतु आत्मकथा के विधागत रूप में लेखन का आरंभ आधुनिक युग में हुआ। महात्मा गांधी की आत्मकथा "सत्य के प्रयोग" को हिंदी आत्मकथा लेखन का आदर्श कहा जा सकता है। जवाहरलाल नेहरू की Toward Freedom भी एक आत्मकथात्मक स्वर लिए हुए है। आरंभिक हिंदी आत्मकथाओं में बाबू गुलाबराय, महादेवी वर्मा, हरिवंश राय बच्चन आदि की आत्मकथाएँ प्रमुख हैं।

हिंदी में आत्मकथा लेखन का व्यवस्थित विकास 20वीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है। भारतेंदु युग में यद्यपि आत्मकथा जैसी कोई विधा प्रत्यक्ष रूप से विकसित नहीं हुई, लेकिन वैयक्तिकता का अभ्युदय यहीं से प्रारंभ होता है। छायावादी काल में यह प्रवृत्ति सशक्त हुई, किंतु आत्मकथा लेखन के प्रारूप को स्वतंत्र रूप से स्वातंत्र्योत्तर युग में स्वीकृति मिली। हरिवंश राय बच्चन की चार खंडों में प्रकाशित आत्मकथा हिंदी में इस विधा की परिपक्वता का उदाहरण मानी जाती है। दलित साहित्य और स्त्री लेखन ने आत्मकथा को एक सामाजिक आंदोलन का स्वरूप दे दिया।

आत्मकथा केवल अनुभवों का संकलन नहीं होती, वह साहित्यिक दृष्टि से भी समृद्ध होती है– भाषा की सादगी और आत्मीयता, सामाजिक यथार्थ का चित्रण, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, प्रेरक और दार्शनिक दृ ष्टिकोण आदि समस्म अवयव इसमें पाये जाते हैं। इस प्रकार आत्मकथा व्यक्ति विशेष की जीवनी होते हुए भी सामूहिक स्मृति और सामाजिक इतिहास की निर्माण प्रक्रिया का अंग बन जाती है। आत्मकथा की अवधारणा केवल आत्मकेंद्रिक लेखन नहीं, बल्कि उसमें सामाजिक, वैचारिक, नैतिक और साहित्यिक पक्षों की गहराई समाहित होती है। यह विधा लेखक को केवल अपनी बात कहने का अवसर ही नहीं देती, बल्कि वह अपने समय और समाज का गवाह भी बन जाता है। हिंदी साहित्य में आत्मकथा का यह विकासक्रम एक सशक्त साहित्यिक आंदोलन के रूप में स्थापित हो चुका है, जो आगे भी विविध रूपों में विस्तार पाता रहेगा।

हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा को समझने के लिए यह आवश्यक है कि इसके ऐतिहासिक और सामाजिक विकास को विश्लेषित किया जाए। आत्मकथा लेखन कोई आकस्मिक प्रवृत्ति नहीं, बल्कि यह भारतीय समाज की सामाजिक चेतना, वैयक्तिक अस्मिता और साहित्यिक अभिव्यक्ति के क्रमिक विकास का परिणाम है। आत्मकथा लेखन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझते समय हमें यह ध्यान रखना होगा कि हिंदी साहित्य ने कैसे–कैसे कालखंडों से गुजरते हुए इस विधा को आत्मसात किया और उसमें नयापन पैदा किया।

भारतेंदु हरिश्चंद्र को हिंदी का "आधुनिक युग" आरंभ करने वाला साहित्यकार माना जाता है। उनके समय में यद्यपि आत्मकथा जैसी विधा स्पष्ट रूप से सामने नहीं आई थी, परंतु साहित्य में वैयक्तिक अनुभूति की अभिव्यक्ति का सूत्रपात हो गया था। यह युग सामाजिक जागरण, धार्मिक सुधार और राष्ट्रीय चेतना के साथ–साथ आत्मचेतना के विकास का भी युग था। लेखकों ने समाज में परिवर्तन लाने के लिए व्यक्तिगत अनुभवों और विचारों को साहित्य में स्थान देना प्रारंभ किया।

द्विवेदी युग (1900–1920) में हिंदी साहित्य ने विचारशीलता, तर्कशीलता और सामाजिक यथार्थ का पक्ष लेना शुरू किया। इस काल में आत्मकथा लेखन के बीज रूप देखे जा सकते हैं, परंतु यह विधा अब

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 1, Issue 10, October 2022

भी एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में विकसित नहीं हुई थी। फिर भी कुछ लेखकों ने अपने पत्रों, निबंधों या आत्मवृत्तात्मक रचनाओं में वैयक्तिक दृष्टिकोण को मुखरित किया, जो आत्मकथा की पृष्ठभूमि तैयार करने वाले तत्व थे।

छायावाद को आत्मकेंद्रितता और वैयक्तिक भावनाओं के उत्कर्ष का युग माना जाता है। इस काल में यद्यपि आत्मकथा लेखन की विधा में कोई विशेष रचना सामने नहीं आई, लेकिन कवियों और लेखकों ने अपने आंतरिक जीवन, संवेदना, संघर्ष और आत्मविश्लेषण को जिस भावबोध के साथ प्रस्तुत किया, वह आत्मकथात्मक वृत्तांत की ओर संकेत करता है। महादेवी वर्मा की कुछ रचनाएँ आत्मकथात्मक शैली की ओर झुकाव दर्शाती हैं, जैसे अतीत के चलचित्र।

महात्मा गांधी की आत्मकथा सत्य के प्रयोग ने आत्मकथा लेखन को एक नैतिक और वैचारिक शक्ति प्रदान की। यद्यपि यह मूलतः गुजराती में लिखी गई थी, इसका हिंदी में अनुवाद व्यापक रूप से पढ़ा गया और इससे हिंदी लेखकों को प्रेरणा मिली। गांधी की आत्मकथा में सत्य, नैतिकता, आत्म–विश्लेषण, सामाजिक प्रतिबद्धता और आत्मसंघर्ष के जो तत्व विद्यमान हैं, वे हिंदी आत्मकथा लेखन की दिशा को गहराई प्रदान करते हैं।

भारत की स्वतंत्रता के बाद आत्मकथा लेखन को हिंदी साहित्य में एक सशक्त विधा के रूप में पहचान मिलने लगी। इस युग में लेखकों, साहित्यकारों, शिक्षकों, राजनेताओं, पत्रकारों और समाजसेवियों ने अपनी जीवन–कथा को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करना प्रारंभ किया। प्रमुख उदाहरण– हरिवंश राय बच्चन की आत्मकथा (चार खंडों में) क्या भूलूं क्या याद करूं, नीड़ का निर्माण फिर, बसेरे से दूर, दशद्वार से सोपान तक। नेमिचंद्र जैन, रामविलास शर्मा, धर्मवीर भारती आदि की आत्मकथाएँ। इस काल में आत्मकथा सिर्फ निजी जीवन की झलक नहीं रही, बल्कि यह सामाजिक–सांस्कृतिक दस्तावेज़ बन गई।

1980 के दशक के बाद हिंदी आत्मकथा लेखन में दो क्रांतिकारी धाराओं का उभार हुआ–

(क) दलित आत्मकथा लेखन– दलित साहित्य आंदोलन के साथ आत्मकथा लेखन का ऐसा विस्फोट हुआ, जिसने साहित्य के परिदृश्य को पूरी तरह बदल दिया। इन आत्मकथाओं में केवल जीवन की घटनाएँ नहीं, बल्कि सदियों से झेली गई पीड़ा, अपमान, असमानता और संघर्ष की गाथा होती है। प्रमुख रचनाएँ– ओमप्रकाश वाल्मीकि की जूठन, शरद पगारे की सिरजनहार, सूरज पाल चौधरी की मैं भंगी हूं।

(ख) स्त्री आत्मकथा लेखन– स्त्री लेखिकाओं ने अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से पुरुषवादी समाज में स्त्री की स्थिति, संघर्ष और अस्मिता को उजागर किया। प्रमुख रचनाएँ– कौशल्या बैसंत्री की दोहरा अभिशाप, मन्नू भंडारी की एक कहानी यह भी, कमलादेवी चट्टोपाध्याय की आमि कमलादेवी।

हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि यह दर्शाती है कि यह विधा यद्यपि पश्चिमी साहित्य से प्रेरित होकर विकसित हुई, परंतु इसकी जड़ें भारतीय समाज की आत्मवृत्ति, स्मृति, संघर्ष और सामाजिक चेतना में गहराई तक पैठी हुई हैं। आत्मकथा लेखन का विकास किसी एक काल में नहीं हुआ, बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया रही है जिसमें वैयक्तिकता से लेकर सामाजिक चेतना, और व्यक्तिगत अनुभव से लेकर सामूहिक प्रतिरोध तक, सब कुछ समाहित है। यही कारण है कि हिंदी आत्मकथा आज एक सशक्त और जीवंत साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित हो चुकी है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 1, Issue 10, October 2022

हिंदी की आत्मकथाएँ बहुआयामी हैं कहीं वे जीवन की कोमल संवेदनाओं को छूती हैं, कहीं सामाजिक अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध बन जाती हैं, तो कहीं वैचारिक मंथन और आत्मनिरीक्षण का दस्तावेज़ बन जाती हैं। आत्मकथा लेखन में निजी और सामाजिक यथार्थ का यह समन्वय हिंदी साहित्य को और भी अधिक प्रामाणिक, संवेदनशील और जीवंत बनाता है।

हिंदी आत्मकथा लेखन में स्त्री दृष्टिकोण– हिंदी आत्मकथा साहित्य में स्त्री दृष्टिकोण का आगमन एक महत्वपूर्ण मोड़ रहा है। यह न केवल स्त्रियों के व्यक्तिगत जीवन के संघर्षों, अनुभवों और उपलब्धियों को उद्घाटित करता है, बल्कि पितृसत्तात्मक समाज की जकड़नों, स्त्री अस्मिता के प्रश्नों और लैंगिक भेदभाव की परतों को भी उजागर करता है। हिंदी में स्त्री आत्मकथा लेखन ने साहित्य को एक नई संवेदना, नई दृष्टि और नए विमर्श से समृद्ध किया है।

स्त्री आत्मकथाएँ पारंपरिक आत्मकथाओं से इस अर्थ में भिन्न होती हैं कि वे केवल उपलब्धियों का बखान नहीं करतीं, बल्कि उन अवरोधों, वर्जनाओं और मानसिक/शारीरिक संघर्षों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं, जिनसे महिलाएँ गुज़रती हैं। इनमें प्रमुखतया निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं, आत्मस्वीकृति और साहसिक कथन, शरीर, यौनिकता और अस्मिता का निर्भीक चित्रण, दोहरे शोषण की व्याख्या, लिंग आधारित और सामाजिक/जातीय, पारिवारिक और सामाजिक जीवन की जटिलताओं का विवेचन, स्त्री चेतना और संघर्ष की दास्तान। प्रमुख स्त्री आत्मकथाएँ मन्नू भंडारी की 'एक कहानी यह भी', कौशल्या बैसंत्री की 'दोहरा अभिशाप' कमलादेवी चट्टोपाध्याय की 'आमि कमलादेवी' उषा प्रियंवदा की 'ज़िंदगी एक दिन'।

स्त्री आत्मकथाएँ आज हिंदी साहित्य का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं। इन आत्मकथाओं ने नारी लेखन को गहराई, विविधता और नई दृष्टि दी है। यह लेखन आत्मदया से परे जाकर संघर्षशील, सशक्त और सामाजिक परिवर्तनकामी स्त्री की तस्वीर पेश करता है।

हिंदी आत्मकथा लेखन में स्त्री दृष्टिकोण ने आत्मकथा को केवल 'व्यक्तिगत वृत्तांत' की विधा नहीं रहने दिया, बल्कि उसे सामाजिक, लैंगिक, सांस्कृतिक विमर्श का हिस्सा बना दिया है। स्त्री आत्मकथाओं ने पितृसत्तात्मक सोच को चुनौती दी है और समाज में स्त्री की भूमिका को नए सिरे से परिभाषित किया है। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि स्त्री आत्मकथा हिंदी साहित्य में सामाजिक बदलाव की सशक्त वाहक बन गई है।

दलित आत्मकथा लेखन, सामाजिक दृष्टि और साहित्यिक प्रभाव– हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा जब दलित अनुभवों से जुड़ती है, तो वह मात्र व्यक्तिगत जीवन की कहानी न रहकर एक सामाजिक दस्तावेज़ में रूपांतरित हो जाती है। दलित आत्मकथाएँ उन यथार्थों को प्रस्तुत करती हैं, जिन्हें मुख्यधारा साहित्य लंबे समय तक नजरअंदाज़ करता रहा। यह लेखन सामाजिक भेदभाव, उत्पीड़न, अस्पृश्यता, जातिवाद और अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध का सशक्त स्वर बनकर उभरता है। प्रमुख हिंदी दलित आत्मकथाएँ ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन', कौशल्या बैसंत्री की 'दोहरा अभिशाप', सूरजपाल चौहान की 'तिरस्कार', बलराज राम की 'अपना होना'।

कुछ आलोचकों का मानना है कि दलित आत्मकथाएँ भावुकता में बह जाती हैं, परंतु यह कहना गलत होगा। वास्तव में, इन आत्मकथाओं की भावुकता सामाजिक पीड़ा की अभिव्यक्ति है, जो प्रामाणिकता को ही दर्शाती है।

हिंदी में दलित आत्मकथा लेखन ने न केवल साहित्य को नई संवेदना प्रदान की है, बल्कि सामाजिक विमर्श को भी एक नई दिशा दी है। यह लेखन मुख्यधारा की चुप्पियों को तोड़ता है, सच्चाइयों को उजागर करता है और उन आवाज़ों को स्वर देता है जिन्हें सदियों तक दबा दिया गया था। 'जूठन', 'दोहरा अभिशाप', 'तिरस्कार' जैसी रचनाएँ हिंदी साहित्य की विरासत का अमिट हिस्सा बन चुकी हैं।

हिंदी आत्मकथा लेखन में भाषा और शैली की विशेषताएँ— हिंदी आत्मकथा लेखन में भाषा और शैली की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि यह विधा लेखक के आंतरिक संसार को उद्घाटित करने और पाठकों से गहरे स्तर पर जुड़ने का माध्यम बनती है। आत्मकथा की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि वह कितनी स्वाभाविक, संप्रेषणीय और प्रभावशाली शैली में अपने जीवन के अनुभवों को पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है। आत्मकथा की भाषा अन्य गद्य विधाओं से अलग होती है क्योंकि इसमें लेखक की निजता, संवेदना, और आत्मस्वीकृति शामिल होती है। इस भाषा में औपचारिकता की बजाय आत्मीयता और आत्मबोध अधिक होता है। आत्मकथाओं में लेखकों ने अपनी मातृभाषा या बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है, जिससे वह अधिक जीवंत और यथार्थ लगती है। भाषा में भावनाओं की तीव्रता और अभिव्यक्ति की सजीवता देखी जाती है। भाषा लेखकीय व्यक्तित्व की झलक देती है और संवाद की तरह प्रतीत होती है। कई आत्मकथाकार अपने क्षेत्रीय शब्दों, लोकोक्तियों और मुहावरों को यथावत रखते हैं, जिससे भाषा अधिक प्रामाणिक बनती है। भाषा और शैली अक्सर लेखक की सामाजिक, जातीय, लिंगीय और क्षेत्रीय पृष्ठभूमि से प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए— दलित आत्मकथाओं में क्रोध, प्रतिरोध और यथार्थ की स्पष्टता भाषा को तीव्र बना देती है। स्त्री आत्मकथाओं में संवेदनशीलता, आत्मस्वीकृति और साहसिक आत्मनुशासन शैली का निर्माण करते हैं। उच्च शिक्षित लेखकों की आत्मकथाओं में चिंतनशील भाषा, वैचारिक बहस और दार्शनिक रंग अधिक दिखाई देते हैं।

कुछ आलोचक आत्मकथाओं की शैली को अत्यधिक आत्मकेंद्रित मानते हैं, लेकिन यह शैली की प्रकृति का अंग है। कई आत्मकथाएँ साहित्यिक सजावट की बजाय कथ्य की सत्यता पर जोर देती हैं, जो उन्हें विशिष्ट बनाता है।

हिंदी आत्मकथा लेखन में भाषा और शैली न केवल लेखक के अनुभवों को अभिव्यक्त करने का माध्यम बनती है, बल्कि पाठकों को लेखक की दुनिया में प्रवेश करने का अवसर भी देती है। यह विधा भावों की सहज अभिव्यक्ति, यथार्थ की निर्भीक प्रस्तुति और आत्मनिरीक्षण की विशिष्ट शैली के कारण समृद्ध हुई है। हर लेखक की भाषा और शैली उसकी वैयक्तिकता, सामाजिक अनुभव और रचनात्मक दृष्टिकोण को दर्शाती है, जो आत्मकथा को अन्य विधाओं से भिन्न और अनन्य बनाती है।

आत्मकथा लेखन और सामाजिक विमर्श— जाति, लिंग और वर्ग का संदर्भ— हिंदी आत्मकथा लेखन महज़ व्यक्तिगत जीवन के अनुभवों का आख्यान नहीं रह गया है, बल्कि यह सामाजिक संरचनाओं, असमानताओं और सत्ता—शृंखलाओं पर प्रश्न खड़े करने वाला साहित्य बन चुका है। आत्मकथाएं अब 'स्व' की कथा से आगे बढ़कर 'समाज' के भीतर व्याप्त जातिगत भेदभाव, लिंग आधारित असमानता और वर्ग संघर्ष का आईना बन गई हैं।

आत्मकथा विधा का सामाजिक विमर्श से गहरा संबंध है। आत्मकथा लेखक अपने जीवन को जिस सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भ में जीता है, वही आत्मकथा का अनुभव संसार बन जाता है। अतः यह विधा सामाजिक संरचनाओं का सजीव लेखा—जोखा प्रस्तुत करती है।

हिंदी आत्मकथा लेखन अब केवल आत्मकेंद्रित साहित्य नहीं रह गया है, बल्कि यह सामाजिक विमर्श की प्रमुख विधा बन चुका है। जाति, लिंग और वर्ग जैसे कारक न केवल आत्मकथाओं की विषयवस्तु को प्रभावित करते हैं, बल्कि वे साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी बनाते हैं। आत्मकथा अब उस साहित्यिक विमर्श का हिस्सा है जो समाज की गूंगी पीड़ाओं को स्वर देता है, और मौन को शब्दों में बदलता है।

हिंदी आत्मकथा लेखन की समकालीन प्रवृत्तियाँ– समकालीन हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन ने नई दिशा, दृष्टि और विमर्शों को आत्मसात किया है। अब यह विधा केवल अतीत के स्मरण का माध्यम नहीं रह गई है, बल्कि यह वर्तमान समय के सामाजिक, राजनैतिक, वैचारिक और सांस्कृतिक द्वंद्वों का प्रतिबिंब भी बन चुकी है। 21वीं सदी के लेखकों की आत्मकथाओं में नई पीढ़ी की आकांक्षाएं, चुनौतियाँ, संघर्ष और आत्मसमीक्षा प्रबल रूप से दृष्टिगोचर होती हैं।

ब्लॉग्स और सोशल मीडिया अर्थात अब अनेक लेखक अपने आत्मकथात्मक अनुभवों को ब्लॉगों, फेसबुक पोस्टों, यूट्यूब चौनलों आदि पर साझा कर रहे हैं।

डिजिटल आत्मकथाएँ अर्थात कई युवा लेखक अपनी ज़िन्दगी के अनुभवों को ई–बुक्स और वेबफॉर्म्स के माध्यम से प्रकाशित कर रहे हैं।

सामाजिक प्लेटफॉर्म्स पर प्रतिक्रियात्मक लेखन अर्थात आत्मकथा अब दैनिक जीवन की जटिलताओं पर सोशल मीडिया प्रतिक्रिया का रूप भी लेती जा रही है।

पाठकों की बदलती रुचिया अर्थात आज के पाठक जल्दीबाजी में हैं; आत्मकथा जैसी विधा का धैर्यशील पाठक वर्ग सीमित हो रहा है।

प्रामाणिकता पर प्रश्न अर्थात कुछ आलोचक समकालीन आत्मकथाओं की सत्यता पर सवाल उठाते हैं, विशेषकर वे जो अधिक 'नाटकीय' लगती हैं।

आलोचना की शुचिता अर्थात आत्मकथाओं में निजी जीवन का खुलासा अकसर विवादों को जन्म देता है, जिससे लेखक को आलोचना का सामना करना पड़ता है।

समकालीन हिंदी आत्मकथा लेखन एक बहुआयामी और जीवंत विधा के रूप में विकसित हो चुका है। अब यह आत्मकथ्य मात्र नहीं, बल्कि समाज, संस्कृति और समय के साथ संवाद का सशक्त माध्यम है। यह लेखन व्यक्ति की पीड़ा, संघर्ष, सफलता और सामाजिक द्वंद्वों को एक नया आयाम देता है। समकालीन आत्मकथाएं नए भारत की मानसिकता, उसकी जिजीविषा और अस्मिता की खोज का लेखा–जोखा हैं।

हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन की परंपरा एक दीर्घकालीन, समृद्ध और बहुआयामी विकास यात्रा रही है। प्रारंभ में यह विधा आत्मप्रशंसा और आत्मवर्णन के दायरे में सीमित थी, किंतु समय के साथ यह सामाजिक विमर्श का एक सशक्त माध्यम बन गई। आत्मकथाएं अब लेखक के व्यक्तिगत अनुभवों से आगे बढ़कर पूरे समाज की आवाज़ बन गई हैं चाहे वह जातिगत शोषण की बात हो, स्त्री की आत्मनिर्भरता की यात्रा, आर्थिक असमानता, या समकालीन राजनीतिक–सांस्कृतिक प्रश्न। बीसवीं सदी के मध्य तक आत्मकथाएं प्रायः उच्चवर्गीय, पुरुष और अभिजात वर्ग तक सीमित थीं, लेकिन समकालीन दौर में स्त्री, दलित, आदिवासी, शोषित–वंचित वर्ग के लेखकों ने आत्मकथा को पुनर्परिभाषित किया है। इन आत्मकथाओं में जीवन की वास्तविकता, अस्मिता की तलाश, और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध आवाज़ बुलंद होती है।

आत्मकथा अब एक दर्पण है जिसमें लेखक स्वयं को ही नहीं, पूरे समाज की परछाई को देखता और दिखाता है। भाषा, शैली, संवेदना और विमर्श का ऐसा सम्मिलन, हिंदी साहित्य में आत्मकथा लेखन को अत्यंत महत्वपूर्ण विधा बना देता है।

संदर्भ सूची–

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश। जूठन। राजकमल प्रकाशन, 1997।
2. बच्चन, हरिवंश राय। क्या भूलूँ क्या याद करूँ। राजपाल एंड सन्स, 1969।
3. मन्नू भंडारी। एक कहानी यह भी। राजकमल प्रकाशन, 2007।
4. तुलसीराम। मुर्दहिया। राजकमल प्रकाशन, 2010।
5. कौशल्या बैसंत्री। दोहरा अभिशाप। वाणी प्रकाशन, 1999।
6. कमलेश्वर। किसी बहाने। वाणी प्रकाशन, 2004।
7. लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी। मैं हिजड़ा, मैं लक्ष्मी। रूपा पब्लिकेशन, 2015।
8. चौहान, सूरजपाल। तिरस्कार। साहित्य उपक्रम, 2008।
9. शरणकुमार लिम्बाले। अक्करमाशी (अनुवाद मोहनदास नेमिषराय)। भारतीय ज्ञानपीठ, 2003।
10. त्रिपाठी, रवींद्र। हिंदी आत्मकथा विकास और विश्लेषण। भारतीय साहित्य संस्थान, 2016।
11. शर्मा, रामविलास। हिंदी साहित्य का सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य। राजकमल प्रकाशन, 1981।
12. सिंह, नामवर। आलोचना और विचारधारा। राजकमल प्रकाशन, 1975।